पुनरजन्म

"एक रहस्य"

महाराज विकासानन्द ब्रह्मचारी

पुनरजन्म

"एक रहस्य"

संकलन कर्ता

महाराज विकासानन्द ब्रह्मचारी

Uttam Publications
Eiman Nagar, Samastipur - 848101 (Bihar)
Mobile : 094710 44415

पुनर्जन्म - एक रहस्य

भारत के आर्य हिन्दू समुदाय में परलोक विषयक सिद्वान्त में एक जन्मान्तर वाद (अर्थात मनुष्य का पृथ्वी में बारम्बार जन्म लेना) है। इसी पूर्वजन्म अथवा परजन्म का डर दिखाकर समाज में शोषण एवं शासन चला आ रहा है। इस सिद्धान्त के आधार पर सतीप्रथा तथा विधवा द्वारा ब्रह्मचर्य आदि नियमों की व्यवस्था की गयी।

अंग्रेज़ी राज्यकाल में पण्डित ईश्वरचन्द विद्यासागर, व राजाराम मोहन राय आदि के द्वारा सतीप्रथा को कानून बनाकर रद्द किया गया तथा विधवा विवाह का प्रचलन किया गया। फिर भी आजकल कही–कही सतीप्रथा का प्रचलन सुनने में आता है।

जिस अगले जन्म के डर से समाज में अधिकांश लोगों का जीवन व्यतीत होता है, कुछ लोगों का इस डर को दिखाकर लाभ भी होता है। इसीलिए ये लोग नही चाहते कि यह भ्रान्ति समाप्त हो जाये।

पुनर्जन्म अर्थात धरती में मनुष्य का बार–बार जन्म लेने का सिद्धान्त अथवा विश्वास सत्य नही है। मूलतः आर्य हिन्दू धर्म में वेदग्रन्थ एक मात्र प्रमाण हैं। वेद ग्रन्थ में जिस विषय का अनुमोदन नही है। वह हिन्दू धर्म में नही होना चाहिए। वेद विरोधी कार्य (कर्मों) से पुण्य की प्राप्ति सम्भव नहीं है।

चारों वेद संहिताओं में ऋक संहिता प्राचीन एवं मूल ग्रन्थ है। इस ऋक संहिता में 10 मण्डल 1028 सूक्त तथा 10552 मन्त्र हैं। लेकिन पुनर्जन्म का कहीं कोई उल्लेख नहीं हैं। इतना तो अवश्य कहा गया है कि जब मनुष्य इस लोक को त्याग कर परलोक में पहुँचता है तो परलोक में पुनः उस लोक के उपयुक्त शरीर की प्राप्ति होगी। कर्मफल के अनुसार अगर वो स्वर्ग में जाता है तो उसके उपयुक्त शरीर मिलेगा और यदि वो नरक में जाता है तो उसके उपयुक्त शरीर की प्राप्ति होगी।

पुनर्जन्म (जन्मान्तरवाद) कब और कैसे शुरू हुआ, यह तो शोध का विषय है। बस इतना कहा जा सकता है कि वेद ग्रन्थ के बाद के समयकाल में इसका ग्रन्थों में क्षेपक (मिलावट) किया गया है। प्राचीन 12 उपनिषदों में से छान्दोग्य तथा बृहदारण्यक उपनिषदों में पुनर्जन्म का विस्तार से वर्णन है। बृहदारण्यक उपनिषद ऋषि याज्ञवल्क्य द्वारा रचित हैं। ऋषि याज्ञवल्क्य ऋषि वैशम्पायन के तथा वैशम्पायन ऋषि व्यास के शिष्य है। शिष्य "ताण्ड" द्वारा छान्दोग्य उपनिषद रचित है। जन्मान्तरवाद विषय इन दोनो ग्रन्थों मे मूल नही है बल्कि प्रक्षिप्त है। यह इस आधार पर कहा जाता है कि दोनो ग्रन्थों में परलोक गति का वर्णन दो–दो स्थान पर मिलता है। एक–एक स्थान पर तो वेद ग्रन्थ से समानता है। जबकि अन्य स्थान पर जन्मान्तर का विस्तार वर्णन है जोकि वेदानुमोदित नहीं है। अब समझने की बात यह हैं कि एक ही ग्रन्थ में एक ही विषय पर परलोक गति का दो प्रकार वर्णन और वह भी एक दूसरे के विपरीत, यह रचनाकार से सम्भव नहीं है। इससे प्रतीत होता है यह बाद में प्रक्षिप्त (मिलाया) किया गया है।

इसमें एक वर्णन को यदि सत्य माना जाये तो दूसरा स्वतः असत्य हो जायेगा। सत्य वही होगा जो वेद ग्रन्थों द्वारा अनुमोदित होगा।

इस विषय पर एक सज्जन पण्डित जी से कुछ वार्तालाप हुई। यह लेख उसी का संकलन है। इस लेख द्वारा सत्य को प्रकाशित करना ही एक मात्र उददेश्य है।

महान करूणामय ईश्वर (परब्रह्म/सृष्टिकर्ता) हम सब को सत्य समझने एवं उसको ग्रहण करने की शक्ति, ज्ञान तथा कृपा प्रदान करें।

महाराज विकाशानन्द

ब्रह्मचारी

अनेक लोग मेरे पास नाना प्रकार की जिज्ञासा लेकर आते हैं। ज्ञान के आधार पर उनको समझाने का प्रयास करता हूँ। एक दिन की बात है कि एक पण्डित जी आये और स्वागत–सत्कार के बाद कुछ प्रश्न किये। आवश्यकतानुसार उन प्रश्नों का उत्तर दिया गया।

पण्डित जी: महाराज जी जन्मान्तर के विषय में आपके क्या विचार है?

महाराज जी: जन्मान्तर वाद या पुनर्जन्म एक असत्य सिद्धान्त हैं।

पण्डित जी: लेकिन महाभारत, पुराणों में तथा उपनिषदों मे तो इसका विस्तार पूर्वक वर्णन मिलता है।

महाराज जी: उन स्थानों में यह सिद्धान्त (मतवाद) बाद में क्षेपक (मिलाया) किया गया है।

पण्डित जी: आपने तो बहुत आसानी से फूँक मारकर ही पुनर्जन्म के सिद्धान्त को उड़ा दिया। महाभारत भीष्म पर्व में पितामह भीष्म का कुरूक्षेत्र में शर विद्ध (बाणों से विच्छेदित) होकर रथ से गिरना तथा पिता शान्तनु से इच्छा मृत्यु का वरदान प्राप्त करना, पितामह भीष्म के द्वारा उत्तरायण काल तक अपनी मृत्यु के लिये प्रतीक्षा करना। **(जिस समय कुरूक्षेत्र युद्ध चल रहा था वह दक्षिणायण काल था इस काल में मृत्यु होने पर पितृयान पथ प्राप्त होकर पुनः जन्म लेना पड़ता है तथा उत्तरायणकाल में मृत्यु होने पर इस पँथ से मुक्ति मिल जाती है, व द्रेवयान पथ प्राप्त होता है इसके फलस्वरूप स्वर्ग की प्राप्ति होती है। ऐसी धारणा है)।** क्या यह सब महाभारत का वर्णन असत्य है?

महाराज जी: यह वर्णन सत्य है या असत्य अभी आप स्वंय ही समझ जायेंगे। प्रथम तो यह विचार करना है कि

क्या शान्तनु को इच्छा मृत्यु का वरदान देने का अधिकार प्राप्त था। पिता शान्तनु के दो पुत्रों की अकाल समय में मृत्यु हुई थी। उनमें से किसी पुत्र की मृत्यु को वो क्यों नही रोक पाये। यह वरदान उन दोनों पुत्रों को क्यों नहीं दिया ? वास्तविकता यह है कि यह वरदान देने का अधिकार शान्तनु को प्राप्त नहीं था।

पण्डित जी: तो क्या यह सब वर्णन प्रक्षिप्त है ?

महाराज जी: महाभारत भीष्म पर्व को विचार की दृष्टि से पढ़ने पर समझा जा सकता है कि भीष्म पितामह उसी दिन मृत्यु को प्राप्त हुये थे जिस दिन शरविद्ध होकर रथ से गिरे थे। उत्तरायण की प्रतीक्षा का वर्णन प्रक्षिप्त है।

पण्डित जी: इस बात से हम सहमत नहीं हो पा रहे हैं।

महाराज जी: भीष्म पितामह की मृत्यु के विषय में महाभारत में क्या वर्णन मिलता है। पहले ये देखते है :–

1. महाभारत के 18 पर्वों मे से एक पर्व का नाम भीष्म पर्व है। इस पर्व में चार उप पर्व है:–

1. जम्बुखण्ड विनिर्माण पर्व
2. भूमि पर्व
3. श्रीभद भागतव गीता पर्व, एवं
4. भीष्म वध पर्व।

विचारणीय बात यह है कि अगर उस समय भीष्म वध नहीं होता तो उसके स्थान पर इसका नाम शरशैय्या पर्व होता। जोकि एक बहुत महत्वपूर्ण घटना है।

2. पर्व संग्रह अध्याय–2 श्लोक संख्या 252–253 के अनुसार भीष्म पर्व में कुल 117 अध्याय तथा 5884 श्लोक होने चाहिये। मगर इस पर्व में क्षेपक (मिलावट) होने के कारण अध्यायों की संख्या– 122 तथा श्लोकों की संख्या– 6100 हो गयी है।

3. भीष्म पर्व के अध्याय 13 व 14 में संजय घृतराष्ट्र को भीष्मवध के विषय में संवाद दे रहे है। 13वें अध्याय में चार स्थानों पर तथा 14वें अध्याय में 13 स्थानों पर भीष्म की मृत्यु होने का उल्लेख है। **जैसे** :–

1 निहंत भीष्मं भरतानां पितामह 11(13/2)

2 हतो भीष्मः शान्तनवो भरतानां पितामहः 11(13/3)

3 सशेते निहतो राजन संख्ये भीष्मः शिखण्डिना 11(13/5)

4 न हतो जाम दग्न्येन स हनोहदय शिखण्डिना 11(13/2)

महाभारत भीष्म पर्व 14वें अध्याय में देखे :–

हतो भीष्म शिखण्डिना 11(14/1)। इसी प्रकार 14/4, 14/16, 14/26, 14/41, 14/44, 14/48, 14/49 14/51, 14/57, 14/61, 14/73 एवं 14/76 कुल 17 बार मृत्यु का उल्लेख है। (119/110)

2 महाभारत आदिपर्व के द्वितीय उध्याय का नाम पर्व संग्रह अध्याय है। महाभारत ग्रन्थ में कुल कितने पर्व है, प्रत्येक पर्व में कितने अध्याय तथा कितेन श्लोक है, इनके साथ–साथ किन–किन विषयों का वर्णन है। इस अध्याय में उन सब का उल्लेख है। भीष्म की मृत्यु न होकर शरशैय्या पर पड़े होने का वर्णन जोकि एक बहुत महत्वपूर्ण व गम्भीर घटना है। इसका वर्णन इस पर्व में अवश्य होना चाहिये था।

बिनिघ्रन निशितैर्वाणैरथाद– भीष्म पातयन 11(महा आदिर्शव 2/250 श्लोक) हन धातु (To Kill वध करना) हन + शतृ = ध्रत होता है।

3. महाभारत अनुक्रमणिका अध्याय में (आदि पर्व–प्रथम अध्याय) धृतराष्ट्र के विलाप के माध्यम से महाभारत की घटना का क्रमानुसार वर्णन है। इस वर्णन में 183 व 184 वें श्लोकों में भीष्म की मृत्यु का वर्णन किया गया है। :–

..... **स्वयं मृत्यु विहिंत घार्मिकेम।**

(महाः आदि पर्व– 1/183)

" यथाश्रोवं भीष्ममत्यान्तशूरं हतं पार्थे नाह वेष्ब प्रधृश्यम। (आदि–1/84)

अब पण्डित जी आप ही बताईये कि भीष्म शरशैय्या पर थे या मृत्यु को प्राप्त हुये थे।

पण्डित जी: तो क्या महाभारत में शरशैय्या का उल्लेख नहीं है?

महाराज जी: भीष्म पर्व के मात्र एक श्लोक (13/14) में इसका उल्लेख है। जबकि इसके विपरीत भीष्मपर्व के 13वें तथा 14वें अध्याय में 17 बार मृत्यु का उल्लेख है। अनुक्रमणिका के 185वें श्लोक तथा आदि पर्व के 251वें श्लोक में भी इसका उल्लेख है। जोकि प्रक्षिप्त है। अर्थात बाद में जोड़ा गया है।

पण्डित जी: महाराज जी ये बात तो अब स्पष्ट हो गयी है कि भीष्म पितामह की इच्छा मृत्यु तथा शरशैय्या पर पड़े हुये उत्तरायण काल की प्रतीक्षा करना ये दोनों घटनाये प्रक्षिप्त हैं। मगर देवयान–पितृयान गति का वर्णन तो महाभारत के अतिरिक्त छान्दोग्य तथा वृहदारण्यक उपनिषद में भी मिलता है, क्या यह भी असत्य है ?

महाराज जी: पण्डित जी एक–एक करके समझने का प्रयास करें। महाभारत भीष्म पर्व 119 अध्याय के 87–109 श्लोकों में जो वर्णन है। उसका सारांश निम्न प्रकार है :–

कुरूक्षेत्र महासमर में भीष्म पितामह असंख्या बाणों से विद्ध होकर रथ से गिर पड़े

थे। उस समय सूर्य का दक्षिणायण काल होने के कारण पितामह भीष्म ने अपने

प्राणों को निकलने से रोक लिया था, क्योंकि दक्षिणायण काल में मृत मनुष्य को

मुक्ति प्राप्त नही होती। इसी लिये उत्तरायण काल की प्रतीक्षा में पितामह भीष्म ने

शरशैय्या पर ही लेटे रहने का निश्चय किया।

पण्डित जी: जी महाराज महाभारत में तो यही लिखा है। उत्तरायण–दक्षिणायण पथ

ही को देवयान–पितृपान पथ कहा गया है।

महाराज जी: अब इस वर्णन में कुछ प्रश्न उत्पन्न होते है। **जैसे**:–

1 क्या उत्तरायण काल में मृत्यु होने पर ही मुक्ति मिलती है ?अन्य कोई मार्ग नहीं है?

2 क्या जितने लोग दक्षिणायण काल में मृत्यु को प्राप्त होते है। उनमें से किसी को मुक्ति नही मिलती ?

3 दक्षिणायण काल में पितृयान पथ के अनुसार धरती में जन्म होने (पुनर्जन्म) की बात अगर महाभारत में कही गयी है तो महाभारत युद्ध में मारे गये सभी लोग दक्षिणायण को तथा पितृयान पथ को प्राप्त हुए थे। अतः उन सभी के पुनः जन्म का वर्णन भी महाभारत में होना चाहिये था।

इन प्रश्नों के विषय में पण्डित जी आपके क्या विचार है ?

पण्डित जी: ग्रन्थ में ऐसा ही कहा गया है। लेकिन कुछ समझ में नहीं आ रहा है। आप ही समझाइये।

महाराज जी: देखिये पण्डित जी प्रथम प्रश्न यह है कि मुक्ति प्राप्ति के लिए उत्तरायण में ही मृत्यु होनी चाहिए।

महाभारत ग्रन्थ के साथ ही छान्दोग्य तथा बृहदारण्यक उपनिषद में भी इसका विस्तार

वर्णन है। सूर्य के "अयन" गति के अनुसार प्रत्येक वत्सर (वर्ष) दो भागों में विभाजित है।

वत्सर (वर्ष) का छः महीने उत्तरायण तथा छः महीने दक्षिणायण

होता है। महाभारत

अनुशासन पर्व 167 अध्याय के 28वें (गीताप्रेस) श्लोकानुसार महाभारत युद्ध उत्तरायण के

आरम्भ में शुरू हुआ था। **"माधोहयं समनुप्राप्तो मासः पून्यो युधिष्ठरा त्रिभागशेषः पक्षोहयं**

भाुक्लों भवितृमर्हति।।" अर्थात इस समय चन्द्रमास के अनुसार माघ का महीना चल रहा

है। इसका इस समय शुक्ल पक्ष भी है, इस माह का एक भाग बीत चुका है तथा तीन

भाग शेष है।

सूर्य की अयन गति उत्तरायण तथा दक्षिणायण का सम्बन्ध देवयान – पितृयान परलोक

पथ से युक्त है। अर्थात उत्तरायण में मृत्योपरांत देवयान गति है तथा दक्षिणायण में

पितृयान गति होती है। इनके साथ–साथ सूर्य की अयन गति शुक्ल तथा कृष्ण पक्ष से

भी सम्बन्धित है। मगर गीता एवं उपनिषदों के भाष्यकार आचार्य शंकर आदि

महा–महोपाध्याय पण्डित गणों ने इस बात को नहीं माना। महाभारत रचनाकार ने भी

अन्य स्थान में इसको नही माना है। इसका विवरण बाद में आयेगा। भगवान आचार्य

शंकर ने वेदान्तदर्शन सूत्र व्याख्या में सूर्य की अयन गति को परलोक पथ (उत्तरायण व

दक्षिणायण = देवयान पथ व पितृयान पथ) नहीं माना है। वेदान्त दर्शन चौथे अध्याय,

दूसरे पाद तथा 18–21 तक सूत्र मे भाष्यकार ने जो व्याख्या दी है।

वह निम्न प्रकार है :–

4/2/18 ▶ "रश्म्यनुसरी" – व्याख्या – **"अथ एत्रः एवं रश्मिभिः उद्वाय आकृमते।** "(छान्दोग्य 8/6/5 मन्त्र) अर्थात सूर्य की किरणों के द्वारा ऊर्ध्व (ऊपर गमण करता है।)

4/2/19 ▶ **निशिनेति चेन्न सम्बन्धस्य यावत् देहभाविवात् दर्शयति च** ।। अर्थात– यदि कहो कि रात्रि में सूर्य की किरणें नहीं होती तो इस प्रकार कहना ठीक नही है। क्योंकि कर्म सम्बन्ध जब तक देह है तब तक बना रहता है। छान्दोग्य उपनिषद के 8/6/2 मन्त्रानुसार "सूर्यलोक से निकलती हुई रश्मियॉ (किरणें) मनुष्य देह की नाड़ियों में व्याप्त हैं और नाड़ियों से निकलती हुई रश्मियों का सूर्य लोक तक विस्तार है। अर्थात सूर्य रश्मियों द्वारा मनुष्य शरीर तथा सूर्य लोक से आपस में निरन्तर संयोग बना रहता है। अतः किसी भी समय मृत्यु होने पर ब्रह्मज्ञानी के लिये सूर्यलोक तक पहुँचने में कोई बाधा नहीं होती।

4/2/20 ▶ **"अतश्चाय ने हपि दक्षिणे"**।। अर्थात इस कारण दक्षिणायण काल में मृत्यु प्राप्त हुए ज्ञानी (ब्रह्मज्ञानी) को सूर्यलोक (उत्तरायण मार्ग/देवयान मार्ग) जाने मे कोई बाधा नहीं होती।

4/2/21 ▶ (केवल सरलार्थ दिया जाता है)– स्मृति आदि ग्रन्थों में देवयान – पितृयान मार्ग का सम्बन्ध उत्तरायण– दक्षिणायण से स्थापित किया जाता है। परन्तु ब्रह्मज्ञान की महिमा बड़ी प्रबल है। अतः दक्षिणायण हो या उत्तरायण हो, कृष्ण पक्ष हो या शुक्ल पक्ष हो, दिन हो या रात्रि हो ब्रहमज्ञानी की मृत्यु किसी भी समय हो उसके लिये

ब्रह्मलोक / मुक्ति प्राप्त होने हेतु कोई विघ्न नहीं होता है।

अतः वेदान्तःदर्शन / ब्रह्मसूत्र के अनुसार महाभारत कथित उत्तरायण– दक्षिणायण मार्ग मान्य नहीं है।

पण्डित जी: क्या भहाभारत के अनुसार जिनकी मृत्यु दक्षिणायण में हुई है, क्या वो मुक्ति तथा उत्तम गति को प्राप्त नही हुए। महाभारत भीष्मपर्व के अनुसार भीष्म वचन ही प्रमाण है, कि दक्षिणायण में मृत्यु होने पर पुनः जन्म लेना पड़ता है, इस गति (मार्ग) में मुक्ति नहीं है। (महाः भीष्म पर्व 119 अध्याय 102–105 श्लोक) ?

महाराज जी: पण्डित जी अब विचार करने योग्य बात यह है कि स्वयं महाभारत रचनाकार ने इस बात को माना है या नहीं।

पण्डित जी: महाभारत ग्रन्थ में लिखा होने के बावजूद, स्वयं महाभारत रचनाकार ही न माने यह तो सम्भव नहीं है।

महाराज जी: महाभारत युद्ध में 18 अक्षौहिणी (अक्ष+ऊहिनी = परिपूर्ण सेना, जिसमें 21870 हाथी हो, 21870 रथ हो, 65610 घेड़े हो, 109350 पैदल सिपाही हो) सेना बल लेकर बहुत से राजा–महाराजा आये थे। महाभारत सौप्तिक पर्व के अनुसार केवल 10 व्यक्ति बचे थे।

(महाः सौप्तिक पर्व 9 अध्याय 48–50 श्लोक) इस सेना बल में से भीष्म के अतिरिक्त द्रौण, कर्ण, अभिमन्यु के साथ–साथ दुर्योधन तथा उसके सौ भाई, दोनो सेनाबल के साथ धार्मिक राज गण भी मृत्यु को प्राप्त हुये थे। यदि भीष्म पर्व को आधार माना जाए तो भीष्म के अतिरिक्त किसी को भी उत्तम गति प्राप्त नहीं हुई। क्योंकि युद्ध में मारे गये सभी की मृत्यु दक्षिणायण में हुई थी। तथा दिन के अतिरिक्त रात्रि में भी मृत्यु हुई थी।

लेकिन ऐसा नही है, महाभारत स्वर्गारोहण पर्व के अनुसार कुरूक्षेत्र महायुद्ध में जो–जो वीर महारथी घटोत्कच आदि मारे गये थे, वे देवताओं और यक्ष के लोक (येस्वर्गलोक है) में गये है। जो दुर्योधन के सहायक थे वे सब के सब उत्तम लोक को प्राप्त हुये। वे श्रेष्ठ पुरूष क्रमशः इन्द्रलोक, कुबेर लोक तथा वरूणलोक को प्राप्त हुये। (ये सभी स्वर्ग के नाम है) (महाभारत– स्वर्गारोहण पर्व अध्याय–5, 27–29 श्लोक)।

अगर प्रक्षिप्तकार का यह मत है कि भीष्म तो वसु अवतार थे उनको वसु लोक प्राप्त कराने के लिए उत्तरायण में मृत्यु प्राप्त कराना था। (महाः भीष्म पर्व–119/105) तो यह भी सत्य नही है। क्योकि महाभारत के स्वर्गारोहण पर्व में कहा गया है कि कर्ण आदिव्य लोक में गये, अन्य महावीर गण, साध्य, विश्वदेवो तथा मरूद गणों में विद्यमान हैं। अभिमन्यु चन्द्रमा, एवं भीष्म वसुओं के साथ, द्रोणाचार्य बृहस्पति के साथ, योद्वागण गन्धर्वो यक्ष आदि के साथ है। (महाः स्वर्गारोहण पर्व, अध्याय–4 श्लोक– 17,18,19,21) अब आप स्वयं ही बताइये कि महाभारत के रचनाकार ने ही नहीं माना, तो अन्य कैसे माने।

पण्डित जीः हम तो इसी को प्रमाण मानते थे और लोगों को भी यही समझाते थे। महाभारत ग्रन्थ में यह वर्णन विरोधाभासी है। इससे प्रतीत होता है कि अवश्य ही यह वर्णन मूल महाभारत का नही। यह बाद में क्षेपक किया गया वर्णन है। अच्छा यह बताइये कि कुरूक्षेत्र युद्ध में मारे गये सभी वीरो को उत्तम लोक की प्राप्ति हुई तो इसके भोगकाल के शेष (अन्त) होने पर उनका जन्म हुआ कि नही ?

महाराज जीः महाभारत ग्रन्थ में (स्वर्गारोहण पर्व अध्याय–5 श्लोक 1–5) राजा जन्मेजय ने भी प्रश्न किया कि सभी के स्वर्गवास के बाद कौन सी गति प्राप्त हुई?

इसका उत्तर महाभारत रचनाकार ने इसी अध्याय में दिया है। इसके अनुसार वे सभी वीर कर्मभोग के पश्चात अपने

मूल स्वरूप में स्वर्ग में मिल गये। इसका वर्णन स्वर्गारोहण पर्व के अध्याय– 5 के श्लोक 11–29 में किया गया है। **मूलतः किसी के पुनर्जन्म का कोई उल्लेख नही है।** दक्षिणायण तथा रात्रि में मृत्यु होने पर भी उन सभी को उत्तम गति प्राप्त हुई तो भीष्म जी को शरशैय्या पर उत्तरायण तक कष्ट भोगने का क्या तात्पर्य है।

पण्डित जी: हम सब महाभारत पढ़ते हुए भी असत्य धारण किये बैठे है। आपका कहना सत्य है कि महाभारत में उल्लिखित उत्तरायण– दक्षिणायण गति का वर्णन महाभारत रचनाकार के द्वारा लिखित नही है। बल्कि यह प्रक्षिप्त है जोकि बाद में जोड़ा गया है। मैं जानता हूँ कि मूल महाभारत में मात्र 24000 श्लोक थे। जो बढ़ाकर के 1,00,000 (एक लाख) से भी अधिक कर दिये गये हैं। लेकिन महाराज जी उपनिषद में जो वर्णन है वह कैसे असत्य है ?

महाराज जी: जो सत्य है, उसके लिये प्रमाण की आवश्यकता नही है। लेकिन जो असत्य है वो कितनी ही चतुराई के साथ क्यो न प्रस्तुत किया जाये। अन्त में असत्य ही प्रमाणित होता है।

पण्डित जी: आप छान्दोग्य उपनिषद से शुरू करें। इसमें स्पष्ट रूप से देवयान–पितृयान पथ एवं पुनर्जन्म का उल्लेख है।

महाराज जी: देखिये पण्डित जी इस उपनिषद की रचना महाभारत के बाद हुई है। व्यास ऋषि के एक शिष्य वैशम्पायन है, और वैशम्पायन के एक शिष्य "ताण्ड" थे। "ताण्ड" ने सामवेद की एक शाखा का प्रचलन किया जिसे "ताण्ड" शाखा कहा जाता है। ताण्ड शाखा के एक ब्राह्मण का नाम "छान्दोग्य ब्राह्मण" है। छान्दोग्य ब्राह्मण में 10 अध्याय है। इनमे 8 अध्यायों को लेकर छान्दोग्य

उपनिषद की रचना हुई है।

छान्दोग्य उपनिषद में 8 अध्याय 154 खण्ड तथा 628 मन्त्र है। छान्दोग्य उपनिषद में दो स्थानों पर परलोक गति का वर्णन है।

1. 5वें अध्याय के 10वें खण्ड में दस मन्त्र है। इन सभी मन्त्रों में परलोक गति का वर्णन है।
2. 8वें अध्याय के छठे खण्ड के 5वें मन्त्र में भी परलोक गति का वर्णन है।

पण्डित जी यह बताइये कि मन्त्र तथा मन्त्र का अर्थ दोनों बताना पड़ेगा या सिर्फ अर्थ ही से आप सन्तुष्ट हो जायेंगे क्योंकि आप तो स्वयं पण्डित व विद्वान है।

पण्डित जी: हम कितने ज्ञानी है हम खुद जानते है। आप मन्त्र तथा मन्त्र के अर्थ के साथ–साथ व्याख्या भी बताइये।

महाराज जी: तो ठीक है, सुनिये–

छान्दोग्य उपनिषद अध्याय–5 खण्ड–10 से

मन्त्र न0–1 **"तद्य इत्थं विद्वुर्ये चेमेहरण्ये श्रद्धा तप इव्युपासते ते हर्चिषममि संभवन्त्यर्चिपोहरह्न आपूर्यमाण– पक्षमा पूर्यमाण पक्षा धान्श डु दड् डेति मासांस्तान्।।"**

मन्त्र न0–2 **"मासेभ्य संवत्सरं संवत्सरा दादित्य मादित्याच्चन्द्रमसं चन्द्रमसो विद्युतं तत्पुरूषों हमानवः स इनान्ब्रह्म गमयत्येश देवयानः पन्था इति।।"**

अनुवाद मन्त्र (1)– जो पन्चाग्नि विद्या को जानकर वन में रहते हुए श्रद्वा एवं तप द्वारा उपासना करते है वे सभी प्राणत्याग के बाद अर्चि (तेज/किरण) में गमण करते है। अर्चि से दिन, दिन से शुक्ल पक्ष, शुक्ल

पक्ष से उत्तरायण के छः मासों को प्राप्त करते है।

अनुवाद मन्त्र (2)—उत्तरायण के छः मासों से संवत्सर को प्राप्त होते है। संवत्सर से आदित्य, अदित्य से चन्द्रमा, चन्द्रमा से विद्युत को प्राप्त करते है। वहॉ पर एक अतीन्द्रिय सामर्थ्य से युक्त पुरूष है। वह उसे परब्रह्म को प्राप्त कर देता है। वही देवयान मार्ग है।

मूलतः परलोक का देवयान मार्ग उन्ही के लिए कहा गया है जो पन्चाग्नि विद्या के द्वारा वन मे रहकर उपासना करते है। इन्ही सब को देवयान मार्ग प्राप्त होता है। **"इसके बाद पितृयान मार्ग एवं उसका परिणाम"**

पितृयान मार्ग

मन्त्र न0—3 "अथ य इमे ग्राम इष्टापूर्ते दन्तमिव्युपासते ते धूममभिसं भवन्ति धूमाद्रत्रिं रात्रेर पर पक्षम परपक्षाद्यान्ष ड्दक्षिणैति मासांस्तान्नैते संवत्सर मभि प्राय्रुवन्ति।।"

मन्त्र न0—4 "मासेभ्यः पितृलोकं पितृलोकादाकाश माकाशाच्चन्द्रमससमेष सोमो राजा तददेवाना मन्नं तं देवा भक्ष्यन्ति ।।

अनुवाद (मन्त्र—3) और जो लोग ग्राम (नगर) में निवास करते है इष्ट (ईश्वर उपासना) पूर्त (समाज कल्याण के कार्य) दत्त (धन, भोजन आदि का दान) करते है वे सब घूम में गमण करते हैं। घूम से रात, रात से कृष्ण पक्ष, कृष्ण पक्ष से दक्षिणायण के छः मासों को प्राप्त करते है। वे लोग संवत्सर को प्राप्त नही कर पाते।

अनुवाद (मन्त्र—4) दक्षिणायण के छः महीनों से पितृलोक, पितृलोक से आकाश, आकाश से चन्द्रमा को

प्राप्त करते हैं। यह चन्द्रमा ही राजा सोम है। वह सभी का अन्न है। समस्त देवगण उसका भक्षण करते है।

पितृयान गति का परिणाम

मन्त्र न0–5 तस्मिन्या वत्सं पात मुषित्वा थैत मेवाध्यानं पुनर्निबर्तन्ते यथेतमाकाशमाकाशा द्वायुं वायुर्भूत्वा घूमो घूमो भवति घूमो भूत्वाभ्रं भवति।।

मन्त्र न0–6 अभ्रं भूत्वा मेधो भवति मेधो भूत्वा प्रवर्षति त इह व्रीहियवा औषधि वनस्पत यस्ति लाभाषा इति जायन्ते हतो वै खलु दुर्निश्प्रपतंर यो यो द्यन्नभन्ति यो रेतः सिन्चति तद्भूय एव भवति।।

अनुवाद (मन्त्र न0–5) वहॉ जब तक कर्मों का क्षय होता है, तब तक उस चन्द्रमण्डल में निवास करने के बाद इस आगे कहे गये मार्ग से ही पुनः वापस लौट आते है। वे पहले आकाश को प्राप्त होते है, आकाश से वायु को, वायु से धूम को धूम से अभ्र (बादल की प्रथम अवस्था) हो जाते हैं।

अनुवाद (मन्त्र न0–6) वे अभ्र से मेघ होते है, मेघ होकर वृष्टि करते है। (बरसते है)। तब वे सभी प्राणी इस लोक में धान, जो, औषधि, वनस्पति, उड़द और तिल आदि होकर प्रकट होते है। इस अवस्था से निकल पाना तो निश्चित ही कठिन है। क्योंकि उस अन्न को जो–जो भक्षण करता है, एवं सन्तान उत्पन्न करता है, वह जीवात्मा उसी प्रकार होती है।

अगले मन्त्र में जन्म विभाग का कर्म से सम्बन्ध है :–

मन्त्र न0–7 "तद्य इह रमणीयचरणा अभ्याशो ह यन्ते रमणीयां

योनिमापघेरन्ब्रह्मणयोनिं वा क्षत्रिययोनिं वा वैश्ययौनिं वाथ य इह कपूयचरणा अभ्याशो ह यत्ते कपूयां योनिमापद्येरन् श्रयोनिं वा सूकरयोनिं व चण्डालयोनिं वा।।"

अनुवाद– उन सभी जीवों में (वापस लौटकर इहलोक में आने वाले) जो श्रेष्ठ एवं सुन्दर आचरण करने वाले होते है वे शीघ्र उत्तम जन्म को प्राप्त होते है। वे सभी जीव ब्रह्मण, क्षत्रिय, वैश्य आदि श्रेष्ठ जन्म का लाभ करते है। जो अशुभ तथा अपवित्र वाले होते हैं वे तत्क्षण ही अशुभ जन्म प्राप्त करते है। जैसे कुत्ते, सूकर, चण्डाल।

अगले मन्त्र में और एक परलोक मार्ग (पथ) का वर्णन किया गया है। इस मार्ग को परलोक का तृतीय मार्ग कहा गया है।

मन्त्र न0–8

"अथैतयोः पथोर्न कतरेण च न तानीमानि क्षुद्वाण्यसकृदावर्तीनि भूतानि भवन्ति जायस्व म्रियस्वेत्येतत्तृतीयं स्थानं तेनासौ लोको न संपूर्यते तस्भाज्जुगुप्सेत तदेष श्लोकः।।"

(छाः–5/10/8)

अनुवाद – जो प्राणि इन दोनो पथ (देवयान–पितृयान) में से किसी मार्ग में गमन नही करते है, वे सभी बारम्बार जन्मने–मरने वाले निम्न प्राणी होते है। (जैसे– मच्छर कीड़े मकोड़े आदि) जन्म लेना और मरना ही उनकी एक मात्र घटना है। इसी को तृतीय मार्ग कहा गया है। इस कारण चन्द्रलोक पूर्ण नही होता है। अतः संसार गति को घृणा करनी चाहिये। (सांसारिक जीवन अधिक आसक्त नहीं होना चाहिये।) इस विषय में यह मन्त्र है।

पण्डित जी: आपने विस्तार पूर्वक परलोक गति के विषय में छान्दोग्य उपनिषद अध्याय–5 खण्ड–10 मन्त्र 1–8 के सन्दर्भ से बताया। छान्दोग्य उपनिषद

12 प्राचीन उपनिषदों में से एक है। आप इसको क्यों नहीं मानते है ?

महाराज जी: अवश्य, मैं इस उपनिषद को 12 प्राचीन उपनिषदों में एक मानता हूँ। लेकिन इसमें जो वेद विरोधी वर्णन है उसको में सत्य तथा प्रमाणिक कैसे मान सकता हूँ।

पण्डित जी: तो महाराज जी क्या आप इस उपनिषद में उल्लिखित परलोक गति (मार्ग) को असत्य अथवा प्रक्षिप्त मानते है ?

महाराज जी: आप भी एक पण्डित है। वेद, उपनिषद आदि ग्रन्थों का अच्छा ज्ञान रखते है। मैं आप को असत्य होने के कारण दर्शाता हूँ। आप स्वयं ही समझ जायेंगे कि क्या सत्य है और क्या असत्य ?

पण्डित जी: हम इसी को जानने के लिए आप के पास आये हैं।

महाराज जी: देवयान मार्ग प्राप्त होने की तीन शर्तें हैं :–

1. वह पन्चाग्नि विद्या का जानने वाला होना चाहिये।
2. वह विद्या जानकर वन में रहने वाला हो अर्थात वन में वास करने वाला हो।
3. पन्चाग्नि विद्या जानकर वन में वास करते हुए, श्रद्धा, तप एवं उपासना करने वाला हो। यही व्यक्ति मृत्यु के बाद देवयान गति को प्राप्त होता है।

पण्डित जी आप ही बताइये कि ऐसी अवस्था में भीष्म पितामह को देवयान गति प्राप्त होना सम्भव है ?क्या महाभारत में भीष्म के विषय में इन शर्तों का उल्लेख है? क्या ये तीनो शर्ते भीष्म पितामह में मौजूद है ?

पण्डित जी: महाराज जी आपने तो समस्या में डाल दिया। देवयान मार्ग प्राप्त करने हेतु छान्दोग्य उपनिषद में उल्लिखित शर्तें भीष्म जी में मौजूद नहीं है। इनमें कौन असत्य है, हम समझ नही पा

रहे है ?

महाराज जी: सत्य सर्वदा स्थिर है। असत्य अस्थिर है, बदलता रहता है। इसी कारण महाभारत तथा छान्दोग्य उपनिषद दोनों ही का परलोक वर्णन असत्य है।

पण्डित जी: महाभारत कथित परलोक वर्णन असत्य है। यह तो समझ में आ गया है। उपनिषदों में लिखित परलोक वर्णन को और विस्तार से समझाये।

महाराज जी: पण्डित जी पहले यह बताइयें कि मनुष्य रूप में जन्म होकर मृत्योपरान्त कौन मुक्ति का इच्छुक नही है ?

पण्डित जी: प्रत्येक व्यक्ति मुक्ति का इच्छुक है।

महाराज जी: तो जो लोग ग्रहस्थ है, ग्राम अथवा नगर में निवास करते है, "इष्ट" (ईश्वर उपासना) "पूर्व" (समाज कल्याण कार्य) "दत्त" (धन, भोजन आदि दान) के द्वारा उपासना करते है, वे सभी मरने के बाद पितृयान पथ (पुनर्जन्म) को प्राप्त होते है, इन लोगो का क्या दोष/पाप है। ये लोग अपने श्रम के द्वारा उत्पादन एवं उपार्जन करके अपने परिवार तथा समाज के भरण पोषण के साथ–साथ अन्य सामाजिक एवं पारिवारिक दायित्वों का भी पालन करते हुए उपासना करते है। बस इनका इतना दोष है कि ये लोग समाज संसार तथा पारिवारिक दायित्वों को त्याग कर केवल अपने स्वार्थ के लिये वन अथवा अरण्य नही गये। क्या वास्तव में यह पाप है ?क्या यह इसी पाप का दण्ड है कि उन्हें पितृयान मार्ग की प्राप्ति हो और उन्हें मुक्ति न मिले ?

अगर सृष्टिकर्ता समाज, संसार, स्त्री, पुत्र आदि के त्याग के माध्यम से तथा वन मे उपासना के द्वारा मुक्ति का मार्ग रखता

तो न तो आगे स्त्री, पुरूष उत्पन्न होते और न ही आप और हम पैदा होते। वेदों के अन्दर ऋषि गणों के सांसारिक जीवन में स्त्री, पुत्र तथा कन्या आदि का उल्लेख पाया जाता है। (ऋः 2 मण्डल, समस्त सूक्त) जो ऋषि राजर्षि पद पर विभूषित हुए वो भी समाज मे ही रहते थे।

पण्डित जी: महाराज जी अब हम समझ गये है कि महाभारत तथा छान्दोग्य उपनिशद में परलोक पथ वर्णन सत्य नहीं है। अवश्य ही यह प्रक्षिप्त है। क्योंकि वेदों से इसका सामंजस्य नहीं है।

महाराज जी: पण्डित जी वैदिक मन्त्रों में संसार परिवार के त्याग का वर्णन नही है। परन्तु इसके विपरीत वर्णन मिलता है। जैसे देखे– " हम लोग शोभन (सत्कर्मकारी) पुत्र– पौत्रों के साथ शत हेमन्त अर्थात सौ वर्ष पर्यन्त सुख भोग करें" (ऋक संहिता मण्डल–6, 11,12,13,14,17 व 24 सूक्तों के अन्त में)।

पण्डित जी: वेद सत्य है। वेदों का यह कथन ही मान्य है।

महाराज जी: परलोक गति के देवयान–पितृयान मार्ग को छोड़कर और एक गति का उल्लेख इस उपनिषद (छान्दोग्य उपनिषद) मौजूद है। (छः–5/10/8) यह वर्णन भी असत्य है। क्योंकि परलोक की दो गतियों (मार्गों) के अतिरिक्त तृतीय मार्ग अथवा अन्य मार्ग है ही नहीं। वेद मन्त्रों में भी दो ही मार्गों का उल्लेख है। (ऋ.–10/88/15) (इसके अतिरिक्त देवगणों की भी जन्म–मृत्यु होती है। वायु पुराण – 66/62,80) वेद मन्त्रों का आप अनुसरण करें य न करें। यह तो आप का निजी विषय है। "देवयान पितृयान मार्ग काल्पनिक है। यह सन्यास वादियों द्वारा क्षेपक किया गया है"।

इस उपनिषद में देवयान–पितृयान मार्ग के विपरीत स्पष्ट रूप से एक और परलोक मार्क का उल्लेख है और यह मार्ग समस्त मनुष्यों के लिए है।

"अथ यत्रैत दस्माच्छरीरा दुत्कमात्य थैतैरेव रशिमभिरूर्ध्वकमते स ओमिति का होद्वा मियते स या वार्त्क्षप्येन्मनस्तावदा द्वित्यं मच्छव्येत द्वैखलुलोक द्वारंविदुश्र प्रपदनं निरोघोह विदुषाम।।" (छा. = 8. 6. 5)

यह मन्त्र अधिक सन्धियुक्त होने के करण अन्वय (वाक्य रूप) करके लिखा जाता है:–

अन्वय :– **अथ सत्र एवत् अस्मात भारीरम उत्क्रामति अथ एतैः एवं रश्मिभिः उर्द्धम आक्रमते, सः ओम इति व द्वउत वा मीयते, स यावत क्षिप्येत, मनः तावत् आद्रिव्यम गच्छति। एतत् वै खलू लोक द्वारम् विदुषाम प्रपदनम् निरोधः अविदृषाम। (छा. = 8/6/5)**

सरलार्थ :– (इसके बाद) जब आत्मा शरीर से बाहर निकल जाती है, तब इन समूह रश्मि. (तेज) के द्वारा ऊर्ध्व (ऊपर) की ओर गमन करती है यदि "ॐ" (परब्रह्म/ईश्वर) के ध्यान के साथ मृत्यु होती है तो निश्चय ही वह उर्ध्व में गमन करती है। आदित्य नामक लोक में वह इतनी ही देर में पहुँच जाती है, जितनी देर में मन एक विषय से दूसरे विषय में गमन करता हैं। यह आदित्य लोक ही ब्रह्म लोक का द्वार है। जिसमें विद्वान (ब्रह्मज्ञानी) ही प्रवेश कर पाते हैं। अज्ञानी प्रवेश नही कर पाते। (आचार्य शंकर से सीतानाथ तत्वभूषण)।

बताइये पण्डित जी एक ही विषय में एक ही ग्रन्थ में दो प्रकार के विपरीत वर्णन का क्यों उल्लेख है।

पण्डित जी: यह तो बड़ी समस्या उत्पन्न हो गयी है।

महाराज जी: इसमें क्या समस्या है ?

पण्डित जी: समस्या यह है कि किसे सत्य माने, दोनों वर्णन एक दूसरे के विपरीत है।

पण्डित जी: आप कुछ और इसकी व्याख्या कीजिये ताकि सरलतापूर्वक समझ में आ जायें।

महाराज जी: वेद मन्त्रानुसार परलोक के केवल दो ही मार्ग है। ये मार्ग (पथ) देवगण, पितृगण तथा मनुष्य गण सभी के लिए है। (ऋ– 10/88/15)। छान्दोग्य उपनिषद 8/6/5 मन्त्रानुसार दो ही मार्गो का उल्लेख है। इनमे प्रथम वो मार्ग जिसका द्वार सूर्यलोक है और दुसरा वो जिसका द्वार असूर्यालोक है। (यजुः 40/3, 12 मन्त्र) ईश उप0– 3 मन्त्र, बृहदारण्यक उप0–4/5/11 मन्त्र) यही दो मार्ग हैं।

अब आप ही निर्णय कीजिये कि कौन सा मार्ग सही है। जिस मार्ग को स्वयं ईश्वर ने सभी मनुष्यों के लिए चुना है एक मात्र वही मार्ग तो सही है।

पण्डित जी: महाराज जी मैं इस विषय में और विस्तार से जानना चाहता हूँ, जिससे बात बिल्कुल साफ हो जाये तथा निर्णय लेने में आसानी हो जाये।

महाराज जी: और एक उपनिषद है जिसका नाम बृहदारण्यक उपनिषद है। यह उपनिषद शुक्ल यजुर्वेद की शाखा के ब्रह्मण शतपथ ब्रह्मण के शेष 14 अध्यायों को लेकर बना है। इस उपनिषद में 6 अध्याय है। इन अध्यायों में कुल 47 ब्राह्मण है। इन समग्र ब्राह्मणों में कुल मिलाकर 435 मन्त्र है। इस उपनिषद में तीन स्थानों पर परलोक विषयक वर्णन है – (1) चौथे अध्याय के चौथे ब्राह्मण में (2) 5वें अध्याय के 10वें ब्राह्मण में तथा (3) छठे अध्याय के दूसरे ब्राह्मण में।

पण्डित जी: इस उपनिषद में परलोक मार्ग का वर्णन किस

प्रकार है ?

महाराज जी: इस उपनिषद के चौथे अध्याय चौथे ब्राह्मण के 3–6 मन्त्रों में तथा अध्याय–6, ब्राह्मण–2 मन्त्र 15–16, दो स्थानों पर परलोक विषय वर्णन है। यह वर्णन छान्दोग्य उपनिषद 5/10/1–10 मन्त्रों के समान ही है। जिसका विस्तारपूर्वक वर्णन पहले आ चुका है। इस उपनिषद का यह वर्णन छान्दोग्य उपनिषद की तरह प्रक्षिप्त है।

पण्डित जी: समझने की सुविधा के लिए व्याख्या कीजिये।

महाराज जी: समझने की सुविधा हेतु मन्त्र एवं मन्त्र का सरल अनुवाद भी किया जाता है :–

"तद्यथा तृणजलायुका तृणास्यान्तं गत्वा हन्यामा कममाकम्यात्मानमुपसं हरव्ये वमे वायमात्मेदं भारीर निहत्याह विद्यां गमयित्वाहन्यमा कममाकम्पात्मान भुपसं हरति।।" (वृ0आ0 = 4/9/03)

अनुवाद :– जैसे तृण (घास पर चलने वाली) जोंक नामक कीड़ा एक तृण के अन्तिम भाग पर पहुँच कर दूसरे तृण का आश्रय ग्रहण करने के लिए अपनी देह को सिकोडता हुआ अन्य तृण पर रखता है, वैसे ही यह आत्मा इस (वर्तमान) शरीर का आश्रय छोड़कर अविद्या का परित्याग करके अपना उपसंहार करते हुए दूसरे नवीन शरीर का आश्रय ग्रहण कर लेती है।

"तद्यथा पेशस्कारी पेशसो मात्रापुपादायान्यन्नवतरं कल्याणतरं रूपं तनुत एवमेवायमात्मेंद भारीरं निहव्या हविद्यां गममित्वा हन्यान्नवतंर कल्याणतरं रूपं कुरूते पिश्रं वा गान्धर्वं वा दैवं वा ब्राह्मं वाहन्येशां व भूतानाम ।। (बृ0आ0 = 4/4/4)

अनुवाद :– जिस प्रकार स्वर्णकार स्वर्ण लेकर उसे नीवन कल्याणकारी रूप प्रदान करता है, उसी प्रकार

यह आत्मा वर्तमान शरीर को चेतना रहित करके, अविद्या से मुक्ति पाकर पितर, गन्धर्व, देव, प्रजापति, ब्रह्म अथवा अन्य प्राणियों के नवीन स्वरूप को धारण करती है अथवा नूतन रूपों का निर्माण करती है।

"तदेव सवन्तः यह कर्मणैति लिंडंग मनो यत्र निषक्तमस्य। प्राप्यान्तं कर्मणस्तस्य यत्किंचेह करोव्ययम्। तस्माल्लोकात्पुनरैव्यस्मै लोकाय कर्मण इति नु कामायमानो हथाकाम यमानो योह कामो निष्काम आप्तकाम आत्मकामो न तस्यं प्राण उत्कामन्ति ब्रह्मैव सन्ब्रह्माव्येति।।" (बृ0आ0 =4/4/6)

अनुवाद :– इस पुरूष का लिंग जिस पर आसक्त होता है उसी की ओर अपनी इच्छा शक्ति एवं कर्म सहित गमन करता है। इहलोक में किये गये कर्मों द्वारा परलोक को प्राप्त करके उन कर्मों के भोग के निमित्त वह पुनः इहलोक में आता है। कर्मफल भोग की कामना वालो का ही निश्चित रूप से आवागमन चलता रहता है, किन्तु निष्काम, आप्तकाम और आत्मकाम पुरूष के प्राणों (इन्द्रियॉ) का उत्क्रमण नहीं होता (संकल्पपूर्वक गमन), वह तो ब्रह्मस्वरूप बनकर ब्रह्म को ही प्राप्त हो जाता है।

पण्डित जी क्या इन तीनों मन्त्रों के साथ ईशवाणी वेद से समानता है ?अपने विचार प्रकट कीजिए।

पण्डित जी: मैंने इस पर कभी विचार किया ही नहीं।

महाराज जी: प्रायः सभी धार्मिक ग्रन्थों में कुछ न कुछ क्षेपक (मिलावट) किया गया है। इसलिये यदि किसी धार्मिक वर्णन पर संदेह हो जाये तो उसको वैदिक वर्णन से विचार करके ग्रहण करना चाहिये।

पण्डित जी: यह वर्णन तो वेद विरोधी है।

महाराज जी: उपनिषद का यह परलोक विषयक वर्णन वेद के साथ–साथ इस उपनिषद के अगले मन्त्र से भी विरोध करता है।

पण्डित जी: यह तो आश्चर्य की बात है। इसे थोड़े विस्तार से समझाइये।

महाराज जी: (1) ऋग्वेद संहिता मण्डल– 10, सुक्त–16, ऋक (मन्त्र)–2 एवं 5 में कहा गया है। कि परलोक में आत्मा को नया शरीर मिलेगा, परलोक में सभी आत्माओं को देवो के वंश में रहना होगा, स्वतन्त्र नही होगे और शुभ–अशुभ का समग्र कर्मफल वहीं भोगना पड़ेगा।

इन मन्त्रानुसार इस लोक में फिर जन्म लेने का कोई उल्लेख ही नहीं है।

(2) ऋग्वेद संहिता –मण्डल–10, सूक्त–14 मन्त्र –2 के अनुसार "हम सब कौन से मार्ग से जायेंगे वह (मार्ग) यमदेव (अर्थात परलोक का मालिक या ईश्वर) पहले ही दिखा देते है। वह मार्ग कभी नष्ट न होने वाला हैं, जिस मार्ग से पूर्व गण गये है, प्रत्येक प्राणी अपने–अपने कर्मों के अनुसार उसी मार्ग से जायेंगे।। (रमेश चन्द्र दत्त)।

अतः इस मन्त्रानुसार परलोक में कर्मफल प्राप्त होने का उल्लेख किया गया है। अर्थात परलोक मे कर्मानुसार ही फल मिलेगा, आत्मा की इच्छा से नही।

(3) बृआ0 उप0 4/4/4 मन्त्र में कहा गया है कि आत्मा इस लोक से शरीर त्याग कर अविद्या से मुक्त हो जाती है। अपनी इच्छा के अनुसार स्वरूप धारण करती है। इनमें पितर, देव, गन्धर्व, ब्रह्मा अथवा अन्य प्राणियों के रूप धारण करती है।

लेकिन पण्डित जी केवल शरीर के त्याग मात्र से अविद्या से मुक्त होना सम्भव नहीं है। बृ0आ0उप0 4/4/6 मन्त्र में कहा गया है – जिसकी कोई कामना नहीं, वह निष्काम है। उसको ब्रह्म

प्राप्ति होती है। केवल कामना रखने वाले का ही आवागमन होता है। लेकिन इस उपनिषद के अगले ही मन्त्र में इसके विपरीत वर्णन है।

अन्धं तमः प्रविशन्ति येहविद्यामुपासते।
ततो भूय इवते तमो य उ विद्यायांरता।। (4/4/10)

अनुवाद :– जो लोग केवल अविद्या (पदार्थ परक कौशल) की उपासना करते है, वे घने अंधेरे में (जहॉ कोई मार्ग नही सूझ पड़ता उस स्थिति में) जा गिरते है। इसी प्रकार जो लोग केवल विद्या (चेतना परक कौशल) की उपासना करते है, वे सभी उसी प्रकार अन्धकार में गिर जाते है।

आनन्दा नाम ते लोका अन्धेन तमसावृताः।
तांस्ते प्रेत्या भिगन्छन्त्य विद्वां सोह बुधो जनाः।।
(बृ0आ0 उप = 4/4/11)

अनुवाद :– जो आज्ञानी और मूढ़जन है, वे मृत्यु उपरान्त आनन्दहीन और अन्धकार से युक्त लोकों को प्राप्त होते है।

उपरोक्त दोनो मन्त्रों से स्पष्ट है कि विद्या एवं अविद्या से ग्रस्त सभी को अन्धकार मय लोक में जाना पड़ता है। "एकमात्र ब्रह्मज्ञानी के द्वारा ही अविद्या एवं कामनादि से मुक्त होकर "मोक्ष" तथा ब्रह्म लोक की प्राप्ति होती है।" (बृहदारण्यक उपनिषद के अतिरिक्त इस प्रकार मन्त्र छान्दोग्य उप0– 8/6/5, ईश उपनिषद तथा शुक्ल यजुर्वेद संहिता में भी मिलते हैं) पण्डित जी अब आप ही बताइये कि किसको मानें और किसको न मानें।

पण्डित जी: वेद ही धर्म का मूल है, वेद कथन ही मान्य है।

महाराज जी: इन उपनिषदों में वेद विरोधी बात कहकर पुनर्जन्म को जोड़ दिया गया है।

पण्डित जी: अब तो यही समझ में आता है कि जन्मान्तर वर्णन प्रक्षिप्त है। महाराज जी यह बताइये कि उपनिषदों में जितने स्थान पर वर्णन किया गया है, क्या सभी प्रक्षिप्त हैं?

महाराज जी: जी पण्डित जी सबके सब प्रक्षिप्त है। इसी बृहदारण्यक उपनिषद में ही देखिये कि परलोक मार्ग वर्णन में सत्य एवं असत्य किस प्रकार है।

वृ0आ0 उपनिषद 6/2/15 एवं 16वें मन्त्र के अनुसार जो पन्चाग्नि विद्या को जानकर वन (अरण्य) में श्रद्धा से सत्य की उपासना करते है, वे सब मृत्यु के बाद अर्चि देवता को प्राप्त करते है। अर्चि से दिन, दिन से शुक्ल पक्ष, शुक्ल पक्ष से उत्तरायण के छः महीने, इससे देवलोक, देवलेक से आदित्य, आदित्य से विद्युत को प्राप्त करते है। विद्युत से मानस पुरूष इन्हें ब्रह्मलोक ले जाते है। वे सब ब्रह्मलोक में चिरकाल निवास करते हैं। (वृ0आ0 = 6/3/15) और जो यज्ञ, दान, तपस्या आदि के द्वारा लोको (स्वर्ग आदि) पर विजय प्राप्त करते हैं, वे मृत्यु के पश्चात धूम को प्राप्त है। धूम से रात्रि, रात्रि से कृष्ण पक्ष, एवं कृष्ण पक्ष से दक्षिणायण के छः महीनों, इससे पितृलोक, पितृलोक से चन्द्रलोक, को प्राप्त होते है। वहॉ उस आनन्द को देवगण उसी प्रकार ग्रहण करते है, जैसे ऋत्विक गण सोम पान करते है। जब उनके पुण्यफल क्षीण हो जाते है। तब वे आकाश को प्राप्त होते है, आकाश से वायु, वायु से वृष्टि, वृष्टि से पृथ्वी को अन्न रूप में प्राप्त होते है। तत्पश्चात पुरूषरूपी अग्नि में आहुति दी जाती है, इससे स्त्री रूपी अग्नि से पुनः जन्मलाभ करते है। इस प्रकार ये सब घूमते ही रहते है किन्तु जो इन दोनो मार्गों (उत्तर–दक्षिण) को नहीं जानते (प्राप्त नही होते), वे सब कीट, पतंग, दन्दशूक (मच्छर) आदि होते है। (सीतानाथ जी) (वृ0आ0 उपनिषद– 6/2/16)

इसी उपनिषद में ही अन्य स्थान पर और एक प्रकार की परलोक गति का वर्णन हैं, जोकि वेद वर्णन से समानता रखती है

—

"यदा वै पुरूषो हस्माल्लोकात्प्रैति स वायुमागच्छति तस्मै स तत्र विजिहीते यथा रथचकस्य एवं तेन स उर्ध्व आकमते स आदित्य मा गच्छति तस्मैं स तत्र विजिहते यथा लम्बरस्य ख तेन स उर्ध्व आकमते स चन्द्रमसमागच्छते तस्मै स तत्र विजिहते यथा दुन्दुभेः खं तेन स उर्ध्व आकमते स लोक मागच्छत्य भाकमहिंम तस्मिनवसति भाश्वती समाः।। (वृ0आ0 उप0 5/10/1 मन्त्र)

अनुवाद :— जब पुरूष (मनुष्य) इस लोक से मुक्त होकर परलोक गमन करता है, तब वह सर्वप्रथम वायुलोक को प्राप्त करता है, वहॉ पर वायु उसके लिये छिद्रयुक्त होकर मार्ग प्रदान कर देता है। वह छिद्र रथ के पहिये के समान है। उस मार्ग से वह उर्ध्व की ओर गमन करता है, इसके बाद वह सूर्य लोक को प्राप्त होता है। यह लोक भी उसके लिए लम्बर नामक वाद्ययन्त्र के समान छिद्र वाला मार्ग प्रदान करता हैं, वहॉ से वह उर्ध्व (ऊपर) की ओर आरोहण करते हुए चन्द्रलोक में पहुॅचता हैं, चन्द्रमा भी उसके लिय दुन्दुभि के छिद्र के समान मार्ग प्रदान करता है। उस मार्ग द्वारा वह ऊपर को बढ़ते हुए वह अशोक (मानसिक पीड़ा से रहित) और अहिम (शारीरिक पीड़ा से रहित, दुख, कष्ट से रहित) लोक (स्थान) में पहुॅचता है। वहॉ चिरकाल के लिये निवास करता है।

पण्डित जी अब आप ही बताइये कि कौन सा वर्णन सही है एवं किस बात को माना जाये ?वेद मूलक वर्णन कौन सा है ?

पण्डित जी: महाराज जी मैं अच्छी तरह समझ गया हूॅ कि पुनः जन्म होने का वर्णन बाद में क्षेपक (मिलाया) किया गया है। किन्तु एक प्रश्न और है कि यह कब और क्यों किया गया?

महाराज जी: वैदिक संहिता के समयकाल के पश्चात धार्मिक मतवाद में परिवर्तन हुआ और लोग कर्मवाद तथा ज्ञानवाद की दो विचारधाराओं में बट गये। इसको आप ऐसा भी कह सकते है–

कर्मवाद – वेदवाद / यज्ञवाद / भोगवाद / देववाद

ज्ञानवाद – त्याग वाद / सन्यासवाद आदि।

कर्मवादी– समाज में रहकर (ग्राम– नगर में रहकर) समाज कल्याण तथा ईश्वर उपासना को कर्त्तव्य मानकर जीवन बिताने को धर्म समझते है।

ज्ञानवादी :– समाज में पल बढ़कर एक आयु को पहुँचने के बाद समाज व संसार को त्याग कर अरण्य (वन) में रहकर ज्ञान का आहरण करना धर्म समझते है।

ये एक दूसरे को परस्पर गलत एवं अपने को सही ठहराने का प्रयास करते थे। बाद में दोनो मतवादियों में सामन्जस्य करके विरोध को खत्म किया गया तदोपरान्त "चतुराश्रम" के विधान की व्यवस्था की गयी । जैसे – ब्रह्मचर्य, ग्राहस्थ, वानप्रस्थ, तथा सन्यास। इस व्यवस्था में दोनो मतवादियों का सम्मान रखा गया। फिर भी ज्ञानमार्गी द्वारा अपने महत्व को बढ़ाने के लिए ये समझाया गया कि वानप्रस्थ तथा सन्यास के द्वारा ही देवयान मार्ग / उत्तरायण मार्ग के माध्यम से मुक्ति तथा मोक्ष की प्राप्ति होती है। ऐसा न करने वालो का पुनर्जन्म होता है।

पण्डित जी: अच्छा महाराज जी वैसे ग्रन्थ के विषय में प्रमाण की आवश्कता नहीं है। लेकिन पुनः जन्म मिथ्या है। इसके लिए कोई युक्ति वाक्य हैं। अगर है तो कुछ बताइये।

महाराज जी: पुनः जन्म वाद का विरोध करने के लिए बहुत से युक्ति वादी वाक्य (प्रश्न) है। जिसका उत्तर जन्मान्तर वादियों के पास नहीं है। क्योंकि ये महा जागतिक सत्य के विरोधी है।

इस विषय का मैं सिद्धान्त व पूर्व पक्ष की शैली में वर्णन करता हूँ।

1. जन्मान्तर वादियों (समर्थकों) का सिद्धान्त हैं कि मनुष्य मरने के बाद पुनः इस लोक में जन्म लेते है। इस सिद्धान्त का प्रतिवादि प्रश्न यह है कि मानव, सृष्टि के आरम्भ में केवल एक मात्र नर एवं एक नारी से उत्पन्न हुए। (अर्थात समस्त मानव जाति के माता पिता एक है।) इन दोनों के जीवन काल में एक से अधिक सन्तानों ने जन्म लिया। उस समय किस की मृत्यु हुई थी। जो प्रथम मानव रूप में जन्म लिया था ?

सिद्धान्ति (जन्मान्तरवादी) :– जब नयी सृष्टि आरम्भ होती है तो पूर्व सृष्टि की जो आत्माये है, वो ही पुनः नयी सृष्टि में जन्म लेते है।

प्रतिवादि :– यह तो पुराणकारों द्वारा पौराणिक कथन है कि सृष्टि प्रलय (धवंस) बार–बार होता रहता है। किन्तु कभी न कभी तो सृष्टि का आरम्भ हुआ था। तो उस समय किसने मरकर मानव रूप मे जन्म लिया था?

सिद्धान्ति (जन्मान्तरवादी) :– सृष्टि अनादि है, इसका आदि नही है अतः प्रथम सृष्टि का उल्लेख ही तथ्यहीन है।

प्रतिवादि :– हॉ, यह कथन वेदान्त दर्शन (ब्रह्मसूत्र) के 2/7/35 सूत्र की व्याख्या में आचार्य शंकर कृत वर्णन में मिलता हैं। किन्तु यह बुद्धि भ्रष्ट बात है। इसके अनेक कारण हैं–

(I) ईश्वर अनादि है। सृष्टि का अनादि होना सम्भव नही है। ईश्वर ने इसको सृष्ट किया, तभी सृष्टि का आरम्भ हुआ। वेद– उपनिषद में यही वर्णन मिलता हैं। देखे (ऋग्वेद– 10/129 सूक्त एवं छान्दोग्य उपनिषद – 6/3/1–2 मन्त्र)।

(II) सृष्टि प्रलय अनादि काल से चली आ रही है। इसका अर्थ हुआ कि सृष्टि ईश्वर द्वारा रचित नहीं है, फिर यह व्यवस्था कौन चलाता है। इसका कोई उत्तर नही है। प्रत्येक कार्य का कारण आवश्यक है, और कर्ता भी। सृष्टि, लय एक कार्य है और इसके कारण आवश्यक है।

ईश्वर इसका कर्ता है। अतः सृष्टि का प्रारम्भ है, यह अनादि नही है।

जन्मान्तर वादियों का एक सिद्धान्त यह भी है कि पिता की आत्मा वीर्य रूप से मातृ गर्भ में जाकर पुत्र रूप धारण कर जन्म लेती है और वे ये भी कहते हैं कि प्राचीन उपनिषद एतरेय उपनिषद में स्पष्ट रूप से पुनः जन्म का उल्लेख है।

प्रतिवादि :– ये दोनों सिद्धान्त ही एतरेय उप0 के है। इसमें पुनः जन्म का वर्णन कुछ अन्य प्रकार है। जैसे– पिता शरीर से वीर्य रूप में माता के गर्भ में पहुँचना प्रथम जन्म कहा गया है। (ऐ0उप0 =2/1/3)। इसके बाद जब धरती में अपने कर्त्तव्य–कर्म करके फिर मृत्यु को प्राप्त होता है तो यह उसका तृतीय जन्म है। (ऐ0उप0 = 2/1/04) इस मन्त्रानुसार स इतः– प्रयन्नेव पुनर्जयते तदस्य तृतीय जन्म। अर्थात इस लोक से चलते चलते ही पुनः जन्म प्राप्त होता है। यह वर्णन सम्पूर्ण क्षेपक है। क्योंकि इस प्रकार वर्णन तो जन्मान्तर वाद का समर्थन वाले मन्त्रों में भी नही मिलता । अगर ऐसा होता है तो पाप–पुण्य का कोई विचार ही नहीं होता। यदि परलोक में कर्मफल के भोग का विषय ही न रहे तो समाज में धर्म–अधर्म का कोई स्थान ही नही रहेगा तथा समाज भी नष्ट भ्रष्ट हो जायेगा। धर्म का मूल उद्देश्य मानव समाज के कल्याण मंगल के साथ उसकी रक्षा करना भी है।

दूसरी बात यह है कि उक्त तीनो मन्त्रों में तीन जन्मों में पुनः पुनः जन्म मृत्यु का वर्णन तथा जन्मान्तर की बात नहीं है।

अब सिद्धान्त सें प्रतिवादि के जो प्रश्न है – "कि पिता की आत्मा ही पुत्र रूप में जन्म लेती हैं। (ऐ0 उप0= 2/1/1–2/1/4) इसके अनुसार :–

1. कोई भी पिता अपुत्रक (पुत्रहीन) नही होना चाहिये
2. कन्या सन्तान के लिये क्या सिद्धान्त है ?
3. बहुत से दम्पति निः सन्तान क्यों है ?

इनका उत्तर जन्मान्तर वादी के पास नही है। क्योंकि जन्म मृत्यु विषय स्वंय ईश्वर की इच्छा से है। मनुष्य तो सिर्फ कल्पना करते है।

4. जन्मान्तर वादियों का एक सिद्धान्त यह है – कि जो मनुष्य अरण्य (जंगल) में जाकर तपस्या के द्वारा देवयान मार्ग (उत्तरायण मार्ग) को प्राप्त करते है, उनकी मुक्ति निश्चित है। जो ऐसा नही करते और नगर/ग्राम में रहकर ही समाज कल्याण तथा ईश्वर उपासना करते है। वे मरणोपरांत पितृयान मार्ग (दक्षिणायण मार्ग) को प्राप्त होते है। इन सभी को पुनः जन्म लेना पड़ता है।

प्रतिवादि :– यह वर्णन छान्दोग्य उपनिषद तथा वृहदारण्यक उपनिषद में प्रक्षिप्त हैं। छान्दोग्य उपनिषद 5/10/1–10 मन्त्रों में इस मार्ग का विस्तारपूर्वक वर्णन पीछे किया गया है। साथ ही इसी उपनिषद के 8/6/5 मन्त्र में इसके विपरीत वर्णन है। जोकि एक दूसरे के परस्पर विरोधी है। 8/6/5 मन्त्र वेदानुसार है। जोकि सत्य हैं।

इसी प्रकार वृहदारण्यक उपनिषद में भी 6/2/10–16 मन्त्र तक परलोक मार्ग वर्णन छान्दोग्य उपनिषद के 5/10/1–10 मन्त्रों के समान है। इसी उपनिषद में एक अन्य स्थान पर परलोक मार्ग का वर्णन हैं जो वेदानुमोदित है एवं सत्य है। इसका भी विस्तार वर्णन पीछे आ चुका है।

अतः जब एक ही उपनिषद में परलोक मार्ग के दो विपरीत तथा परस्पर विरोधी वर्णन है, तो जो वर्णन वेदो का अनुमोदन करता है वही सत्य माना जायेगा।

मुक्ति प्रत्येक मनुष्य की काम्य वस्तु है। यदि प्रत्येक मनुष्य समाज–संसार त्याग कर अरण्य (वन) में एकान्त उपासना हेतु गमन कर जायेगा तो समाज नष्ट हो जायेगा। क्या ईश्वर ऐसा ही चाहता है ?

यदि मनुष्य/व्यक्ति समाज व संसार छोड़कर वन में ईश्वर की उपासना करे तो उसके जीवन की मूलभूत भौतिक आवश्यकताएं कैसे सम्पन्न होगी ?ऐसा करने से सन्तान धारा ही बन्द हो जायेगी।

छान्द्रोग्य एवं वृहदारण्यक उपनिषदों के उपरोक्त उल्लिखित मन्त्रानुसार जिन महापुरूषों ने वन (अरण्य) में उपासना नही की उन्हे मुक्ति नही मिलनी चाहिये। रामायण एवं महाभारत में ऐसे बहुत से महापुरूष है। जिन्होने अरण्य में उपासना नही की। उनका क्या होगा ?

4. जन्मान्तर वादियों का यह भी एक सिद्धान्त है कि कर्मफल के अनुसार पितृयान मार्ग को प्राप्त हुए मनुष्यों का पुनः जन्म भी तीन श्रेणियों में से किसी एक श्रेणी में होता है। जैसे–

(1) सुन्दर आचरण अर्थात धार्मिक व्यक्ति ब्रह्मण, क्षत्रिय अथवा वैश्य जाति में जन्म लेते है।

(2) अशुभ आचरण वाले अर्थात अधार्मिक व्यक्ति कुत्ता, सूकर आदि पशु तथा चण्डाल आदि मनुष्य में जन्म लेते हैं।

(3) देवयान–पितृयान मार्ग को प्राप्त न होने वालों का जन्म कीड़े मकोड़े आदि में होता है।

<u>प्रतिवादि :–</u> यह सिद्धान्त वास्तविक अवस्था से मेल नही खाता है। वर्तमान युग (कलियुग) में पुराण की भाषा में धर्म एक पाद तथा अर्धम त्रिपाद है। अर्थात धर्म मात्र 25 प्रतिशत तथा अर्धम 75 प्रतिशत है। ऐसी अवस्था में मरने वाले मनुष्यों में अधिक संख्या पापियो की हैं। उक्त सिद्धान्त के अनुसार पशु आदि प्राणियों की संख्या अधिक

होनी चाहिये । लेकिन इस समय मनुष्यों की संख्या इतनी अधिक है कि शासन प्रणाली जनसंख्या नियन्त्रण पर विवश है। इस समय अरण्य में उपासना तो न के बराबर है। लेकिन जो भी है, उन्ही को मनुष्य रूप में जन्म लेना चाहिये। परिणामस्वरूप मनुष्यों की संख्या निरंतर कम होनी चाहिये तथा पशुओं की संख्या बढ़नी चाहिए। जबकि वास्तविक अवस्था यह है कि प्राय सभी पशुओं की संख्या कम हो रही है, कुछ विलुप्त प्राय हैं और कुछ बिल्कुल विलुप्त हो गये है। इसीलिये कुछ पशुओं का संरक्षण किया जा रहा है।

5. जन्मान्तर वादियों का एक सिद्धान्त यह है कि बहुत से मानव मातृ गर्भ से अथवा जन्म से ही विकलांग होते है। उनकी विकलांगता का कारण पूर्वजन्म में किये गये कर्मफल है।

प्रतिवादि :– यह वर्णन पुराणकारों का है। उपनिषद मे जहॉ जन्मान्तर का उल्लेख किया गया है वहॉ इस प्रकार वर्णन नहीं है।

"सर्व अंग युक्त, अथवा अंगहीन, मन्दबुद्धि अथवा बुद्धिमान, रंग–रूप (काला अथवा गौरा) स्त्री अथवा पुरूष यह तो जैनेटिक साइंस का विषय है। ये सब क्रोमोसोम्स (गुणसूत्र) एवं जीन्स के प्रभाव के अन्तर्गत है। (यह कथन ऐतरेय उपनिषद के 2/1/1–2 मन्त्र में मौजूद है)

6. जन्मान्तर वादियों का एक सिद्धान्त यह है कि यदि कोई बालक अपने पूर्व जन्म के विषय मे बोलता है, और जिस स्थान और व्यवहार के विषय से वहअनभिज्ञ हैं, अगर उस बालक द्वारा बात सच निकलती है तो पूर्व जन्म मानना ही पड़ेगा।

प्रतिवादि :– यह जातिस्मर कहा जाता हैं। अर्थात पूर्व जन्म

की बातों का स्मृति में रहना। यह एक भ्रम है।

1. यह स्मृति मस्तिष्क का एक कार्य है मरने के बाद मनुष्य की आत्मा ही परलोक पहुँचती हैं। मस्तिष्क व इन्द्रियाँ परलोक नहीं पहुँचती है। मनुष्य के शरीर के साथ ही मस्तिष्क व इन्द्रियों का क्षय हो जाता है। नव जात शिशु का शरीर व इन्द्रियॉ सब नयी होती है। अर्थात इनका विकास एवं उत्पत्ति नये सिरे से होती है। अतः पूर्व जन्म की स्मृति प्राप्त होना सम्भव नही है।
2. यदि इस प्रकार पूर्व जन्म की स्मृति प्राप्त होना सम्भव होता तो अधिकाधिक मनुष्यों में इसका प्रभाव होता।
3. जातिस्मर केवल बाल्यकाल में ही पाया जाता है। आयु, ज्ञान व वृद्धि बढ़ने के साथ यह स्मृति नही रहती है। ऐसा क्यों होता है।
4. यदि यह घटना सत्य होती तो सम्पूर्ण जीवन काल में स्मरण रहनी चाहियें थी।
5. यह भी सम्भव नही है कि इस घटना को भूल जाये, क्योंकि एक लम्बे जन्म अन्तराल के बाद जिस बात को न भूला हो व समान्य दिनों में भूल जाये।

पण्डित जी अब बताइये जन्मान्तर के विषय में आपका कोई और प्रश्न शेष है ?

पण्डित जी: जन्मान्तर के विषय मे तो और कोई प्रश्न नहीं है। न ही इसमें कोई वास्तविकता है और न ही यह व्यवहारिक है, यह एक मनगढन्त बात हैं। महाराज जी कभी–कभी मन में एक प्रश्न तो आ ही जाता है कि इस संसार में कोई धनवान है और कोई दरिद्र अवस्था में है। इस असमानता का क्या कारण है ?

महाराज जी: अर्थात आपका प्रश्न यह है कि कोई जन्म से सुखी है और कोई जन्म से दुखी है।

पण्डित जी: इसका उत्तर मिल जाये तो मेरा संदेह समाप्त हो जायेगा।

महाराज जी: सर्वप्रथम यह जानना आवश्यक है कि सुख और दुख किस वस्तु का नाम है ? साथ ही यह भी जानना आवश्यक है कि मनुष्य के किस अंग के द्वारा यह अवस्था ग्रहण की जाती है। सुख एक विशेष मानसिक अवस्था का नाम है जिसमें समग्र इन्द्रियॉ सम्भाव (यथायोग्य) अवस्थान करती हैं तथा आनन्द का अनुभव होता है। दुःख भी एक विशेष मानसिक अवस्था का नाम है, जिसमे समग्र इन्द्रियॉ असम्भाव (बिगड़ी हुई) अवस्था में अवस्थान करती हैं तथा कष्ट का अनुभव होता है।

जिस प्रकार ध्वनि, कान के द्वारा दर्शनीय वस्तु , ऑखों के द्वारा, खाद्य वस्तु जीभ के द्वारा तथा गन्ध को नाम के द्वारा ग्रहण किया जाता है, ठीक उसी प्रकार सुख और दुख को मन के द्वारा ग्रहण किया जाता है। अतः जिसके मन में कष्ट नही है, मन में आनन्द (खुशी) रहती है, चाहे धन रहे य न रहे। जिसके मन में आनन्द नही है, उसके मन में कष्ट रहता है, चाहे धन रहे य न रहे।

मानसिक आनन्द को त्यागकर यदि कोई व्यक्ति किसी उपाय से धनवान बन भी जाता है तो उसे भौतिक सुख सुविधाएँ जैसे– अच्छा व सुन्दर मकान/बंगला, सुन्दर आराम दायक व बहुमूल्य गाड़ियॉ इत्यादि तो अवश्य प्राप्त हो जायेगी पर अतिव्यस्तता के कारण उसे दूसरे शारीरिक रोगों का सामना करना पड़ता है। जैसे– अनिद्रा (नीन्द कम आना) मानसिक तनाव के कारण ब्लड प्रैशर, शुगर (मधुमेह) तथा पैप्टिक अल्सर, ह्रदय सम्बन्धित बीमारियॉ आदि। क्या आप इसको सुख समझते हैं ?इस

संसार में धन के द्वारा सम्पूर्ण भोग्य वस्तुओं को अर्जित करने के उपरान्त भी क्या व्यक्ति खुश (मानसिक आनन्द) रह सकता है – यदि वह हृदय रोगी है तो बहुमंजिला मकान होने के बाद भी डॉक्टर की सलाहनुसार उसको एक ही तल पर रहना पड़ेगा, और यदि वह मधुमेह का रोगी है तो मीठी खाद्य पदार्थों को त्यागना पड़ेगा और यदि वह अल्सर का रोगी है तो मसालेदार व घी–तेल से बने खाद्य पदार्थों को त्यागना होगा।

सांसारिक भौतिक सुख–सुविधाओं की चेष्टा उतनी ही करनी चाहिये जितनी व्यक्ति विशेष को उसकी आवश्यकता है और ऐसा करना उसका कर्त्तव्य हैं, परन्तु इससे अधिक प्राप्त करने की इच्छा लोभ है। यह (लोभ) पाप है। प्रयोजन से अधिक जो भी सामग्री है। वह आपकी नही हैं। दया, क्षमा, दान व भक्ति मानवता (आदर्श मनुष्य) के मूल भूत गुण है। ईश्वर द्वारा आपके प्रयोजन से अधिक सामग्री आपको इसलिये प्रदान की गयी है ताकि आप इन गुणों के द्वारा (दया, क्षमा, दान, भक्ति) ईश्वर को प्रसन्न कर सकें। ईश्वर की प्रसन्नता ही इस जीवन का उददेश्य है। ईश उपनिषद में है – ईशवास्यमिंद सर्वं यत्तकिंच जगत्यांजगत तेन त्यक्तेन भुन्जीथा मागृधः कस्य स्विद्धनम।

इस सृष्टि में जो कुछ भी है वह सब ईश द्वारा आवृत–आच्छादित है। (उसी के अधिकार में हैं, अर्थात उसी का है) केवल उसके द्वारा उपयोग हेतु सौपे गये (भौतिक सुख सुविधाऐं की सामग्री) का ही उपभोग करो, लालच मत करों। (क्योंकि यह) धन किसका हैं ? (अर्थात किसी व्यक्ति का नही, केवल ईश्वर का है)

अतः धन सुख का कारण नही है, यह प्रयोजन सम्पूर्ण (सांसारिक जीवन) करने की साधन वस्तु मात्र है।

अतः धनवान अथवा निर्धन होने का सम्बन्ध पुर्वजन्म अथवा परजन्म से नही है।

ईश्वर द्वारा प्रदत्त दान सबके लिए समान है जैसे– प्रथ्वी, वायु, सूर्य, पानी, अग्नि आदि। धनी हो या दरिद्र इनके द्वारा ईश्वर सभी को समान लाभ पहुँचाता है। परब्रह्म/परम ईश्वर प्रत्येक

प्राणी / जीव / मनुष्य की आवश्यकताओं को जानता है और उसी के अनुसार दान करते है।

ईश्वर हम सब को सत्य समझने की तथा उसका अनुसरण करने की बुद्धि दान करें और हमको परलोक में मुक्तिदान करें।